वैदिक विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का आगार वाल्मीकि

डा॰ सुरचना द्विवेदी

विज्ञान एवं प्रौह्योगिकी की पल्लवित विचारघाओं के दर्शन हमें अति प्राचीन कालीन विभिन्न ग्रन्थों के श्लोकों एवं उक्तियों आदि से हो जाते हैं। ऋग्वेद, भगवद्गीता, सांख्य-दर्शन, वैशेषिक-दर्शन, वेदान्त-दर्शन (ब्रह्मसूत्रों) आदि, सभी में वैज्ञानिक विचारधाराएं हमें बड़ी उन्नत अवस्था में प्राप्त होती है। भारतीय अध्यात्म में यह स्थापित धारणा रही है कि बह्म के समग्र स्वरूप को जानने के लिए ज्ञान-विज्ञान को जान लेने के उपरान्त अन्य कुछ जानने योग्य नहीं रह जाता।[1] इस प्रकार ये धारणाएं ज्ञान-विज्ञान के प्रति हमारी प्राचीन भारतीय विचारधारा को प्रदर्शित करती हैं।

हमारे प्राचीन मनीषियों ने जहाँ धर्म और दर्शन के बिषय में चिन्तन-मनन किया, वहीं विज्ञान का क्षेत्र भी उनसे अछूता नहीं रहा। उन्होंने अपनी सतत साधना के परिनामस्वरूप जगत् के गूढ़ रहस्यों को जाना और गूढ़ रहस्य सामान्य ज्ञान द्वारा नहीं जाने जाते अपितु इनके लिए विशिष्ट ज्ञान की आवश्यकता होती है और यही विशिष्ट ज्ञान विज्ञान है। विज्ञान शब्द की उत्पत्ति वि उपसर्ग पूर्वक संस्कृत की ज्ञा धातु मे ल्युट् (अन्) प्रत्यय लगाने से हुई है, जिसका तात्पर्य- विशेष ज्ञान या विशिष्ट ज्ञान है। उदाहरण के लिए जब दैनिक जीवन की सामान्य घटनाओं तथा पदार्थों आदि को हम देखते हैं, जिनकी सामान्य प्रकृति आदि को ही जानते हैं, जैसे कोई आकाशीय पिण्ड (सूर्य, चन्द्र, तारे-नक्षत्र आदि) जिसके नाम, रूप आदि को सामान्य रूप से हम जानते और देखते हैं, तो वह ज्ञान सामान्य ज्ञान होगा। परन्तु जब उन पिण्डों आदि के विषय में हम और अधिक जानने की कोशिश करते हैं, जैसे उन आकाशीय पिण्डों की उत्पत्ति एवं उनकी अवस्थिति, दूरी, परिक्रमण, परिभ्रमण, आदि, तो वह ज्ञान विशिष्ट ज्ञान हो जाता है और यही विशिष्ट ज्ञान विज्ञान है। ऐतिहासिक दृष्टि से, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारत का विशेष योगदान रहा है। शून्य तथा अंकों व उनके स्थानीय मान की खोज, दिल्ली लौह स्तम्भ एवं देवालयों की उत्कृष्ट शिल्पकला आदि विभिन्न कालों की भारतीय वैज्ञानिक प्रतिभाओं के अविस्मरणीय उदाहरण हैं।

विदेशी विद्वानों में ही नही बल्कि शिक्षित भारतीयों में भी यह एक प्रचलित धारणा है कि वैद, उपनिषद, दर्शन व महाकाव्य आदि प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में वर्णित हमारी परम्परागत धरोहर मुख्यतः धर्म एवं दार्शनिकता से सम्बन्धित है। इनके अनुसार इन ग्रन्थों में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का उल्लेख नगण्य है, ऐसी विचारधारा होने के मुख्य कारण यह हैं किः--

1. विज्ञान एवं प्रद्योगिकी से सम्बन्धित सन्दर्भ ऐसे अनेक ग्रन्थों में फैले हुए हैं, जिनका मुख्य विषय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी नहीं है।
2. यह ग्रन्थ संस्कृत, पाली व अन्य शास्त्रीय भाषाओं में हैं, जिन्हें समझना एक आम आदमी के लिए कुछ कठिन है।
3. इसके अतिरिक्त हमारे प्राचीन ज्ञान-विज्ञान का लगभग समस्त भण्डार अत्यन्त संक्षिप्त रूप मै वर्णित है, जिसे केवल इन भाषाओं के विशेषज्ञ ही समझ सकते हैं।

प्राचीन भारतीय वैज्ञानिक धरोहर की अभिज्ञता का पूरा उत्तरदायित्व हम पर है। हमारी वैज्ञानिक परम्परा अत्यन्त उज्ज्वल है। इस गौरवपूर्ण अतिहास को पहले हमें स्वयं जानना व समझना होगा। इसके पश्चात् ही हम हसे संसार के समक्ष प्रस्तुत करने में समर्थ होंगे। प्राचीन भारतीय मूल ग्रन्थों में विज्ञान व प्रौद्योगिकी से सम्बन्धित जानकारी का उल्लेख मात्र ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि इनका आधुनिक विज्ञान की कठिन कसौटियों पर सही उतरना भी अनिवार्य है।

इसी सन्दर्भ में रामायणकालीन वैज्ञानिक प्रगति का हम अध्ययन करें, तो इस काल की बौद्धिक प्रवृत्तियों में विज्ञान का बहुत महत्वपूर्ण स्थान मिलता है-- भौतिकीय, ज्यामिति, रासायनिक, धातुकीय सिद्धान्त, कृषि, खगोल विज्ञान, सामुद्रिक-शास्त्र, फलित-ज्योतिष, वास्तु विज्ञान, चिकित्सा-शास्त्र जिसके अन्तर्गत आयुर्वेद, रोग निवारण, जड़ी-बूटी ज्ञान, शल्य-चिकित्सा, शव-संरक्षण, पशु-चिकित्सा आदि आते हौं, इन सभी पक्षों पर वाल्मीकि ने रामायण में तत्सम्बन्धी प्रचुर सामग्री को प्रस्तुत किया है। वाल्मीकि रामायण में वैज्ञानिक विचारधाराओं का ज्ञान हमें ग्रन्थ में वर्णित विभिन्न कथानकों के माध्यम से होता है, जिनका विवेचन अग्रिम पंक्तियों में किया जाएगा।

चिकित्सा विषयक अनेक कथानको को वाल्मीकि रामायण में व्यवहृत किया गया है, विभिन्न घटनाओं में उनका उल्लेख प्राप्त होता है। आयुर्वेद-

आयुर्वेद के जनक धन्वतरि तथा त्रिदोष (वात-पित-कफ) आदि का उल्लेख आया है।[2] अयोध्या नगरी वैद्यजनाकुला, वैद्यों से भरपूर थी।[3] राजा लोग वैद्यों के प्रति सम्मानपूर्ण व्यवहार करते थे। चित्रकूट पर राम ने भरत से पूंछा था, कि तुम प्रमुख वैद्यों को दान, आन्तरिक अनुराग और मधुर वचनों से स्वागत तो करते हों।[4] राजाओं की सेवा में कुशल वैद्य नियत रहते थे।

रोग के लिए रामायण में, व्याधि और आमय शब्द आये हैं। रोगी के लिए आतुर शब्द आया है। व्याधित दीर्घकालीन दुष्ट रोगों से पीड़ित व्यक्ति था। चिकित्सा-निदान को विधान कहा जाता था। रामायण में कई रोगों के नामोल्लेख किए गए हैं-उन्मादः (पागलपन), कुब्जः (कूबड़ वाला), गर्भ-परिस्त्रवः (गर्भपात), नेत्रातुरः (नैत्र-रोग जिसमें दीपक की ज्योति नहीं सुहाती), मृगतृष्णिका (भ्रमरोग), चित्तमोह (मन की विक्षिप्त दशा), हनुरभज्यत् (जबड़ा टूटना), महोदर (जलोदर), व्रण (फौड़ा), वात-गतिः (वात-रोग) तथा विण्मूत्राशयावरणः (मल-मूत्र का अवरोध)। उपर्युक्त व्याधियों के उपचार हेतु वाल्मीकि रामायण में यथास्थान वर्णन भी मिलता है।

उत्तराकाण्ड में महोदर रोग के व्यापक दुष्प्रभावों का विस्तृत वर्णन हुआ है। कहा जाता है कि, एक बार वायु देवता के प्रकोप से सभी प्राणियों का मल-मूत्र रूक गया, उनके लिए सांस लेना कठिन हो गया, उनके जोड़ टुटने और पेट फूलने लगे। वायु के निरोध से सारी प्रजा को वर्णनातीत कष्ट उठाना पड़ा। तब वायु देव की प्रसन्नता के लिए सामूहिक प्रार्थनाएं की गयीं, जिससे वह पहले की तरह सब प्राणियों में संचार करने लगे,, वायु के अवरोध से मुक्त होकर सारी प्रसन्न हो गई।[5] इससे सूचित होता है कि प्रार्थना द्वारा रोग निवारण में लोगों का विश्वास था।

उस समय की चिकिस्ता प्रणाली में मुख्यतः जड़ी-बूटी से निर्मित औषधियों का प्रयोग होता था। वनों और पर्वतों में इनकी खोज की जाता थी।[6] अपनी प्रभा से ये औषधियाँ आस-पास के प्रदेश को आलोकित करती रहती थीं।[7] महेन्द्र, चित्रकूट आदि पर्वत जड़ी-बूटियों के लिए काफी प्रसिद्ध थे। वानरों जैसी वनचर जातियों को औषधियों के प्राप्ति स्थान का पता रहता था। कुछ औषधियाँ ऐसी प्रतिरोधात्मक (एंटीसेप्टिक) होती थीं कि उनको शरीर पर लगा देने से घातक शस्शस्त्रों के प्रभावों से बचा जा सकता था। त्रिशिरा आदि राक्षस वीरों ने रण-क्षेत्र में जाने से पूर्व औषधियों और ग्रन्थों का अपने शरीर पर लेप कर लिया था।

बेहोश व्यक्तियों को होश में लाने के लिए सुगन्धयुक्त जल प्रयुक्त होता था, जिसका उल्लेख आया है। जब राम (माया) सीता की हत्या की बात सुनते हैं तो वे मूर्च्छित हो जाते हैं। तब वानर सेनानायक उन पर कमलों और उत्पलों की गन्ध से सुवासित जल छिड़कने लगे।[8] इस काल में युद्धों का बाहुल्य था। अतः रण-क्षेत्र में घायलों के उपचार हेतु चिकित्सा का विशेष प्रबन्ध रहता था। सुग्रीव के श्रसुर सुषेण एक निपुण चिकित्सक थे, जिन्होंने इन्द्रजीत द्वारा घायल और मूर्च्छित लक्ष्मण को हिमाचल की मृतसंजीवनी, विशल्यकरणी, सुवर्णकरणी और संधानी नामक चार महौषधियों से स्वस्थ किया था। मृतसंजीवनी मूर्च्छा दूर करके चेतना प्रदान करने वाली, विशल्यकरणी शरीर में धंसे हुए वाण आदि को निकालकर घाव भरने और पीड़ा दूर करने वाली, सुवर्णकरणी शरीर में पहले की सी रंगत लाने वाली तथा संधानी टूटी हड्डियों को जोड़ने वाली औषधि थी। इस प्रकार तत्कलीन वैद्यों को वनस्पति विज्ञान का प्रचुर व्यवहारिक ज्ञान था और उनकी जड़ी-बूटियाँ नानाविध एवं प्रभावोत्पादक होती थीं।

तत्कालीन वैद्य शल्य-चिकित्सा में भी निपुण थे। जिन्हें शल्यकृत (शल्य चिकित्सक) कहा जाता था। सीता की एक उक्ति जो उन्होंने लंका में अपनी असहाय अवस्था पर विलाप करते हुए कही थी कि यदि राम समय पर आकर मेरी रक्षा नहीं करेंगे तो अनार्य रावण मेरे अँड़ों को शीघ्र पैने वाणों से वैसे ही काट डालेगा, जैसे शल्य-चिकिस्तक गर्भ स्थित बालक को निकालने के लिए गर्भ को तेज औजारों से काट डालते हैं।[9] इससे ध्वनित होता है, कि कठिन प्रसव की दथा में शल्य-चिकित्सक गर्भाशय की शल्य-क्रिया किया करते थे। कैकयी-दशरथ विवाद में राजा अलर्क का नामोल्लेख आता है, जिन्होंने एक ब्राह्मण की याचना पर अपनी आंखें निकालकर उसे दे दी थीं।[10] जी संकेत करते हैं कि एक व्यक्ति से दुसरे व्यक्ति में शल्य-क्रिया द्वारा अंड़ों का प्रत्यारोपण किया जाता था। एक अन्य स्थान पर उल्लेख आता है कि स्त्रियाँ बिना किसी शतरे के सन्तान प्रसव किया करती थीं।[11] इसी तरह समय से पूर्व जन्में बच्चाँ को धायें घी की घड़ों में सेती थीं, जब तक की बालक परिपुष्ट न हो जाएं।[12] कहा जाता है, कि सगर की छोटी रानी सुमति ने एक मांस-पिण्ड का प्रसव किया था, तब धायों ने घी से भरे घड़ों में उस मांस-पिण्ड का संवर्धन किया था। घी एक ऐसा पदार्थ है, जिसमें शैल्य अथवा उष्णता का प्रसरण शीघ्रता से नहीं होता है। इस कारण समान तापमान पर शिशु को सेने के लिए वह एक उपयुक्त माध्यम था।

चिकित्सा में पथ्य अर्थात् स्वास्थ्यकर संयत भोजन का बड़ा महत्व था। रोग के आक्रमण को रोकने तथा रोग का उपचार करने, दोनों दृष्टियों से रोगी कि लिए पथ्य आवश्यक है। अनजाने में भी लिया हुआ कुपथ्य रोगों को न्योता देता है।[13] सदा ऐसा ही भोजन करना चाहिए जिसे खाने से मनुष्य बीमार न पड़े।[14]

मिस्रवासियों के समान एवं उससे काफी समय पूव्र शव-संरक्षण की तकनीक रामायण काल में भी प्रचलित थी। संरक्षण के लिए विशेष प्रकार के तेलों, मसालों और लेपों का प्रयोग होता था। राजा दशरथ की मृत्यु हो जाने पर बिना पुत्र के दाह-संस्कार उचित नहीं समझा गया, अतः भरत के आने पर उनके शव को तैलपूर्ण कड़ाह में संरक्षित किया गया था।[15] इसी प्रकार राजा निमि के शव को ब्राह्मणों ने उनके यज्ञ की समाप्ति तक संरक्षित करके सुरक्षित रखा था।[16]

मानव शरीर-रचना का तत्कालीन चिकित्सकों को सम्यक ज्ञान था, शारीरिक अंड़ो-उपांड़ो का वाल्मीकि ने यथातथ्य उल्लेख किया है। रोगी में प्राण अवशेष है या नहीं, इसका निदान करने में उसकी आकृति एवं भाव-भंगिमा पर ध्यान दिया जाता था। जरा, व्याधि और मृत्यु से मनुष्य की रक्षा करने के लिए प्रत्येक युग के चिकित्सक शोधरत रहे हैं। रामायण में भी अमरत्व पाने के प्रयत्नों का उल्लेख मिलता है।[17] इसी अभिलाषा से देवों तथा दानवों के बीच अमृत के लिए समुद्र-मंथन किया गया था।

विभिन्न पशु-पक्षियों और उनकी विशेषताओं का भी रामायण मे स्थल-स्थल पर वर्णन मिलता है। मानव के निकट रहने वाले पशुओं जैसे हांथी, घोड़ों आदि को सूक्ष्म अवलोकन के प्रमाण मिलते हैं। वाल्मीकि ने समुद्र में से उछलती महाझषों (बड़ी मछलियों), तीन तथा पांच फल वाले सांपों आदि का कई जगह उल्लेख किया है।[18]

धातुकी ज्ञान का भी विकास था, क्योंकि युद्धों का बाहुल्य होने से विभिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण, रथों का निर्माण आदि किया जाता था, इसके साथ ही विभिन्न प्रकार के आभूषणों का भी प्रचलन धातुकी ज्ञान को स्पष्ट करता है। वैमानिकी शास्त्र का ज्ञान रामायण में उल्लिखित 'पुष्पक विमान' से हो जाता है। कृषिकर्म का प्रचलन विभिन्न श्लोकों से हो जाता है। सीता का जन्म धरती से ही माना गया है एवं सीता का शाब्दिक अर्थ ही 'जुते हुए खेत' का परिचायक है।

खगोल अथवा नक्षत्र-शास्त्र का पर्याप्त अनुशीलन होती था। दिन, रात, मास, वर्ष के चक्र और पजांड़ के विषय में लोगों को बहुत पहले ही वैज्ञानिक जानकारी हो चुकी थी और कवि उनका स्थल-स्थल पर उल्लेख करता है। जैसे राम-लक्ष्मण की अनुपस्थिति में दुरात्मा रावण यशस्विनी सीता के पास वैसे ही आया, जैसे दारूण राहू चन्द्रहीन रोहिणी को ग्रस लेता है।[19] बाली और सुग्रीव का तुमुल युद्ध आकाश में बुध और अंड़ारक ग्रहों के घोर संघर्ष के समान था।[20] क्रोध से भरकर झपटता है।[21] चन्द्रमा और रोहिणी के संयोग को वाल्मीकि ने प्रगाढ़ दाम्पत्य प्रेम का आदर्श माना है। इनके अतिरिक्त एक नक्षत्र का दूसरे ग्रह से आक्रांत होना, सूर्य और चन्द्र पर ग्रहों का आक्रमण करना और परिणामस्वरूप महासागरों का विक्षुब्ध हो जाना आदि। खगोल जगत् की ये घटनाएं सुविदित थीं। सूर्य और चन्द्र ग्रहण के अनेक संकेत आए हैं। हेमन्त ऋतु के वर्णन में लक्ष्मण ने सूर्यनारायण के दक्षिणायन हो जाने की चर्चा की है।[22]

नक्षत्र जगत् की घटनाओं को शुभ-अशुभ मानकर उरका जीवन से तादात्म्य स्थापित किया जाता था। सूर्य और चन्द्र का राहु ग्रस्त हो जाना, रोहिणी नक्षत्र का बुध, राहू या आंड़रिक द्वारा अथवा चित्रा का शनि द्वारा आक्रांत होना, धूम्रकेतु का नेत्रर्त नक्षत्र को अभिभूत कर लेना, तारों का यथावत् अतिक्रमण न करना अथवा ग्रहों का एक-दूसरें के प्रति क्रुद्ध रूप धारण कर निस्तेज हो जाना आदि घटनाएं अशुभ मानी जाती थीं। इसके विपरीत शुक्र तारे का निर्मल और कान्तिमान् दिखाई पड़ना, प्रभायुक्त सप्तऋषियों का उज्जवल ध्रुव की प्रदक्षिण करना विशाखा नक्षत्र के दोनों तारों का उपद्रव-रहित होकर प्रकाशित होना, उत्तरफाल्गुनी नक्षत्र का उच्च स्थान में होना (यह सीता का जन्म-नक्षत्र था, रावण के विरूद्ध राम का अभियान इसी नक्षत्र में प्रारम्भ होने के कारण सीता के लिए मुक्ति का सूचक था) आदि शुभ लक्षण माने जाते थे।

फलित ज्योतिष और सामुद्रिक-शास्त्र का काफी प्रचार था। ज्योतिषी के लिए रामायण में देवज्ञ, गणक, कार्तातिक, लक्षणी, लाक्षणिक आदि संज्ञाओं का प्रयोघ किया गया है। मुहूर्त-ज्योतिष-विद्या ब्राह्मणों के एकाधिकार में थे तथा राजदरबारों में उन्हें उच्च स्थान प्राप्त थे। महाराज दशरथ को उनके ज्योतिषियों ने बताया था कि आपके जन्म नक्षत्र को सूर्य, मंगल और राहू, इन दारूण ग्रहों ने घेर लिया है, ऐसे निमित्तों से राजा बहूधा विपत्ति में पड़कर प्राणों से हाथ धो बैठता है।[23] सीता के वनवास की पूर्व घोषणा ज्योतिषियो ने उनका पितृगृह में कर दी थी।[24]

रेखागणित (ज्यामिति) का भी अच्छा ज्ञान था। प्रारम्भ से ही भारतीय संस्कृति में यज्ञ-विधान का उच्च आध्यात्मिक महत्व रहा है और यज्ञों के सम्पादन हेतु यज्ञ-वेदी का निर्माण किया जाता था, जिसके लिए समकोण, वर्ग, वृत्त आदि का ज्ञान आवश्यक था। अतः इस काल में रेखागणित विकसित अवस्थाय में था। ज्यामिति के नियेमों द्वारा सावधानी से नापी गई भूमि पर यज्ञ-वेदी प्रतिष्ठित की जाती थी। इसके साथ ही नगर-संरचना, भवन-निर्माण तथा स्थापत्य कला की उन्नति ज्यामिति के तत्कालीन ज्ञान का बोध करा देती है। ईटों (इष्टकाः) का प्रयोग भी रेखागणित की प्रगति सूचित करता है।[25] क्योंकि लम्बाई, क्षेत्रफल, आयतन आदि के पारस्परिक सम्बन्ध, गुणितों में गिनी जाने वाली ईटों की बनी दीवारों, घनों, वेदियों और शंकुओं

(पिरामिडों) से बड़ी सरलता से स्पष्ट हो जाते हैं।

वाल्मीकि रामायण में प्रचुर विज्ञान है। नक्षत्र, ज्यामिति, चिकित्सा-शास्त्र आदि के साथ ही ब्राह्माण्ड की रचना, बेतार प्रणाली द्वारा सन्देशप्रेषण, प्रस्थ, वैमानिकी आदि का भी उल्लेख आता है। यह विज्ञान तभी दृष्टिगत होता है, जब श्लोकों के एक एक शब्द तथा प्रयुक्त विशेषणों पर सूक्ष्मता से ध्यान दिया जाए। सांसरिक कर्मो व आध्यात्मिक बातों को प्राकृतिक घटनाओं के उदाहरण दकर समझाया गया है। कुछ श्लोकों में स्वतन्त्र रूप से विज्ञान है और कुछ में विज्ञान की बातों को उदाहरण देते हुए स्पष्ट किया गया है। अतः इन सभी के सूक्ष्म अध्ययन एवं मनन करने की आवश्यकता है।

तत्कालीन वैज्ञानिक उन्नति पर हमें ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व को गर्व होना चाहिए, साथ ही हमें विश्व की अन्य सभ्यताओं की वैज्ञानिक एवं तकनीकी धरोहर को भी खुले दिल से स्वीकार करना चाहिए। विश्व नागरिक होने के नाते हमें अपनी एवं उनकी उपलब्धियों पर गर्व है। इसके साथ ही हमें यह ध्यान भी रखना होगा कि विश्वा ने विज्ञान के विशाकारी पहलू भी देखे हैं। आज यह अनुभव किया जा रहा है, कि विज्ञान मानवजाति व प्रकृति के लिए एक चुनौती बन चुका है। वेदों एवं अन्य प्राचीन ग्रन्थों में स्थापित विश्व-बन्धुत्व की भावना ही मनुष्य को अपने इस ज्ञान को सम्पूर्ण मानवजाति, पर्यावरण एवं प्रकृति के विरूद्ध प्रयोग करने से रोक सकती है। इसी के माध्यम से हमारा सर्वे भवन्तु सुखिनः का सपना साकार हो सकता है।

सन्दर्भ ग्रंथ

1. प्रा.भा.इति., सं. एवं पुरातत्वविभाग, गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार।
2. पुरातत्वसंग्रहालय, गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार।
3. भगवद्गीता, 7, 2 ज्ञान तेऽहं सविज्ञानमिंद वक्ष्याम्यशेषतः। याज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ज्ञाततव्यमवशिष्यते।।
4. वाल्मीकि रामायण, 1, 45, 31, 75, 7
5. वाल्मीकि रामायण, 2, 100, 42
6. वाल्मीकि रामायण, 2, 100, 13, कच्चित्... वैद्यान्... चाभिमन्यसे। 2, 1000, 60 कच्चित्... वैद्यान्... मुख्यांक्ष राघव। दानेन मनसा वाचा त्रिभिरेतैर्बुभूष्ज्ञसे।।
7. वाल्मीकि रामायण, 7, 35, 50-65
8. वाल्मीकि रामायण, 6, 74, 21-31
9. वाल्मीकि रामायण, 6, 74, 32, द्रक्षस्योषधयो दीप्ता दीपयन्तीर्दिशो दश।
10. वाल्मीकि रामायण, 7, 35, 40-65
11. वाल्मीकि रामायण, 6, 74, 21-32
12. वाल्मीकि रामायण, 6, 74, 32, द्रक्षस्योषधयो दीप्ता दीपयन्तीर्दिशो दश।
13. वाल्मीकि रामायण, 6, 69, 18, सर्वोषधीभिर्गन्धैक्ष समालभ्य महाबलाः। निर्जग्मुः.....।।
14. वाल्मीकि रामायण, 5, 28, 6, तस्मित्रनागच्छति लोकनाथे गर्भस्थजन्तौरिह शल्यंकृतः। नूनं ममांगान्यचिरादनार्यः शरैः शितैश्छेत्स्यति राक्षसेन्द्रः।।
15. वाल्मीकि रामायण, 2, 14, 5, याचमाने स्वके नेत्रे उद्धत्याविमना ददौ
16. वाल्मीकि रामायण, 7, 41, 19, अरोगप्रसवा नार्यः।
17. वाल्मीकि रामायण, 1, 38, 18, घुतपूर्णेषु कुम्भेषु धत्रयत्सान् समवर्धय्।।
18. वाल्मीकि रामायण, 2, 64, 59, अपथ्यैः सह संयुक्ते व्याधिरत्ररसे यथा। अपथ्यव्यंजनोपेतं भुक्तमत्रमिवातुरम।
19. वाल्मीकि रामायण, 3, 50, 18, तदत्रमपि भोक्तव्यं यदनामयम्।
20. वाल्मीकि रामायण, 2, 66, 14, तैलद्रोण्यां तदामात्याः संवेश्य जगतीपतिम्।
21. वाल्मीकि रामायण, 7, 57, 11, तं च देहं नरेन्द्रस्य रक्षन्ति स्म द्विजोत्तमा। गन्धैर्माल्यैश वस्त्रैश पौरभृत्यसमन्विताः।।
22. वाल्मीकि रामायण, 1, 41, 35, अजरा विजराश्चैव कथं स्यामों निरामयाः।
23. वाल्मीकि रामायण, 6, 51, 35, व्यदारयद्वानरसागरौधं महाझषः पूर्णभिवार्णवौधाम्। त्रिशीर्षाविव पत्रगों। 5, 1, 54, पंचास्याविव पत्रागो।
24. वाल्मीकि रामायण, 3, 46, 6, रोहिणीं शशिना हीनां ग्रहवद् भृशदारूणः।
25. वाल्मीकि रामायण, 4, 12, 17, गगंने ग्रहयोर्धोरं बुधांगारयोरिव।

26. वाल्मीकि रामायण, 6, 92, 42, अभ्यधावत संक्रुद्धः रवे ग्रहो रोहिणीमिव।
27. वाल्मीकि रामायण, 3, 16, 8
28. वाल्मीकि रामायण, 2, 4, 18-20
29. वाल्मीकि रामायण, 2, 29, 9, पुरा पितृगहे सत्यं वस्तव्यं किल में वने। लक्षणिभ्यो द्विजातिभ्यः श्रुत्वाहं वचंनं गृहे।।
30. वाल्मीकि रामायण, 1, 14, 28, इष्टकाश्च यथान्यायं कारिताश्च प्रमाणतः। चितोऽग्निर्ब्राह्मणैस्तत्र कुशालैः शिल्पकर्मभिः।।